स्त्री जनित समस्याएँ

ममता कालिया कृत 'लड़कियाँ' उपन्यास के विशेष संदर्भ में

डॉ. मनमीत कौर
विभागाध्यक्ष
हिंदी विभाग
राधा गोविन्द विश्वविद्यालय, झारखण्ड

शोध सारांश:
हिंदी साहित्य में ममता कालिया की एक अलग पहचान है । वर्त्तमान स्त्री के सभी हालातों को उन्होंने अपने उपन्यासों में यथार्थ चित्रण किया है । 'लडकियाँ' उपन्यास में भी उन्होंने दो लड़कियों के माध्यम से स्त्री के अस्तित्व को पुरुषप्रधान समाज में स्थापित करने का कार्य किया है । ममता कालिया ने अपने इस उपन्यास में 'बलात्कार की समस्या' को भी रेखांकित किया है। विशेषकर कामकाजी लड़कियाँ अक्सर अपनी सुरक्षा को लेकर चिंतित दिखती हैं। इस उपन्यास के द्वारा लेखिका स्त्री विमर्श के कई गंभीर मुद्दों को हमारे समक्ष प्रस्तुत की है।

बीज शब्द:
पुरुषप्रधान समाज, दाहकर्म, मॉब लिंचिंग', सामाजिक कोढ़, स्त्री विमर्श, आधुनिक नगर बोध

"हमारा साहित्य हमें बहुत-सी चतुर और ऐसी स्त्रियों के हवाले देता है जो सच्ची थीं और मरते दम तक बहादुर रहीं। उनके उदाहरणों का हमारे लिए मूल्य है, उनसे हमें प्रेरणा मिलती है। फिर भी हम जानते हैं कि हिंदुस्तान में तथा दूसरी जगहों में स्त्रियों की हालत कितनी दीन है। हमारी सभ्यता, हमारे रीति-रिवाज, हमारे कानून, सब आदमी ने बनाए हैं और आदमी ने अपने को ऊँची हालत में रखने, स्त्रियों के साथ बर्तनों और खिलौनों जैसा बर्ताव करने और अपने फायदे और मनोरंजन के लिए उनका शोषण करने का पूरा ध्यान रखा है।...

"स्त्रियों का काम है कि वे आदमी के बनाए हुए रीति-रिवाजों और कानून के जुल्म से अपने को मुक्त करें। इस लड़ाई को उन्हें खुद ही लड़ना होगा। ..." - जवाहरलाल नेहरू[1]

ममता कालिया द्वारा रचित 'लड़कियाँ' उपन्यास ऐसी ही दो लड़कियों की कहानी है जो पुरुषप्रधान समाज में अपना अलग अस्तित्व स्थापित करने के लिए संघर्षरत हैं। दोनों लड़कियों ('लल्ली' और 'अफशाँ') की अपनी अलग-अलग समस्याएँ और डर हैं किंतु दोनों एक-दूसरे का साथ पाकर स्वयं को सुरक्षित महसूस करती हैं। लल्ली एक कामकाजी लड़की है जो मुंबई जैसे महानगर में एक विज्ञापन एजेंसी में काम करती है। वह एक बहुत बड़ी इमारत 'कावसजी मैंशन' के एक फ्लैट में अकेली रहती है। समाज में आए दिन होने वाली घटनाओं चोरी, ठगी, बलात्कार, छेड़खानी आदि से किसी भी कामकाजी लड़की का जो अपने घर-परिवार से दूर अनजान शहर में अकेली रह रही हो, भयभीत रहना स्वाभाविक है। लल्ली को भी यह भय हमेशा सताता रहता था। अतः एक दिन जब उसके मालिक हामिद की कजिन अफशाँ उसके साथ कुछ दिनों के लिए रहने आती है तो लल्ली काफी राहत महसूस करती है। चूँकि यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है, इसलिए लल्ली का स्वगत कथन इस प्रकार है, "इन दिनों मुझे बड़ी शिद्दत से महसूस हो रहा था कि इतने बड़े शहर की इतनी बड़ी इमारत में मेरा यों अकेले रहना ठीक नहीं। क्या पता कब क्या हो जाए।

आए दिन चोरी, ठगी और बलात्कार की खबरें पढ़-पढ़कर मन अलग दहल जाता। इसलिए जब तमाम इंतजार के बाद आखिरकार अफशाँ मेरे पास पहुँची, मुझे काफी तसल्ली हुई। एक से भले दो। पहले ही दिन से उस बड़ी-बड़ी कजरारी आँखों वाली अफशाँ ने मुझे आपा कहकर मोह लिया।"[2] दोनों लड़कियाँ परस्पर अपनत्व का भाव महसूस करती हैं। मानो, इस अनजान शहर में वे दोनों ही एक-दूसरे का सहारा हों।

उपन्यास में लेखिका ने सुरजीत सिंह अहलूवालिया नामक पुरुष पात्र के माध्यम से अवैध रिश्तों के लिए अपनी पत्नी को जलाकर मार देने वाली घटना का उल्लेख किया है। सुरजीत सिंह इस घटना को इतनी सफाई से अंजाम देता है कि यह घटना, घटना नहीं बल्कि दुर्घटना मात्र बनकर रह जाती है और किसी को अगर शक होता भी है तो वह पुलिस केस में पड़ने से बचने के लिए चुप्प साध लेता है। वस्तुस्थिति का वर्णन इस प्रकार है, "सुरजीत सिंह चार बजे के करीब चीत्कार करता कॉरीडोर में बदहवास निकला, "एक्सीडेंट, एक्सीडेंट..।" गिने-चुने लोग उस वक्त तीसरे माले पर थे, सब जमा हो गए। देखा गया, रसोई में मिसेज सुरजीत का बदन पूरी तरह जला पड़ा था। भागमभाग डॉक्टर बुलाया गया, उसने मैसेज सुरजीत सिंह को मृत घोषित कर दिया। कुछ ही घंटों में लाश को विद्युत शवदाहगृह में ले जाया गया। पड़ोसियों के मन में कई सवाल उठे, पोस्टमॉर्टम एक्जामिनेशन क्यों नहीं किया गया? दाहकर्म के लिए नाते-रिश्तेदारों का इंतज़ार क्यों नहीं किया गया? बच्ची पूजा और उसकी आया कहाँ गायब थीं? लेकिन वे सब अपने-अपने सवाल दबाकर अपने घरों के दरवाजे और भी जोरों से बंद कर बैठ गए। पुलिस केस बनने से सभी डरते थे। सबके अपने-अपने भय थे। फिर सुरजीत अहलूवालिया की लुटी हुई सूरत देख उन्हें यही सोचना ठीक लगा कि नायलॉन की साड़ी ने ही यह कहर ढाया था।"[3] अंतिम वाक्य में लेखिका ने व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। लल्ली जब ऑफिस से घर लौटती है तो उसे उस घटना का पता चलता है और वह सारा वाकया सुनकर दहशत में आ जाती है। लल्ली का स्वगत कथन है, "दाहकर्म से लौटकर सारी रात सुरजीत अहलूवालिया पागलों की तरह धाड़े मार-मारकर रोता रहा, केश नोचता रहा, अपने कपड़े तार-तार करता रहा। मर्द के रोने की आवाज बहुत अलग होती है, मनहूस और डरावनी। रोती हुई औरत करुणा या क्रोध उपजाती है, पर मर्द का रोना अपशकुन लगता है। उस रात पहली बार मुझे घर में अपना आप अकेला, अभागा और असुरक्षित लगा। दो बार रसोई में जाकर मैं गैस बंद कर आई। सभी स्विच ध्यान से बंद किए। लेकिन रात-भर मैं सो न सकी।"[4]

पत्नी को मरे तीन ही दिन हुए होते हैं कि सुरजीत एक विदेशी औरत को घर ले आता है और वह वहीं बस जाती है, "चौथे दिन सुरजीत सिंह ने होश किया, नहाया, कपड़े बदले, साफा बाँधा और निहायत संजीदा शक्ल में बाहर निकला। दूर से देखने पर वह एक ऐसा ठूँठ लग रहा था, जिस पर रात बिजली गिरी हो। उसने अपनी कार स्टार्ट की और चला गया। उसके नौकर को भी नहीं पता था कि वह कहाँ गया। रात जब वह लौटा, अकेला नहीं था। उसके साथ उसकी नन्ही बच्ची पूजा, उसकी आया और एक बेहद गोरी मोटी विदेशी औरत थी, जिसने रात में भी काला चश्मा लगा रखा था। फ्लैट में दाखिल होते ही उन लोगों ने कसकर दरवाजा बंद कर लिया। उस दिन से वह औरत वहीं बस गई। कानाफूसियों में लोग सुरजीत सिंह को एक बेवफा, हत्यारा, बेहया इंसान कहने लगे, लेकिन उसके सामने किसी ने चूँ-चपड़ न की।"[5] यहाँ सुरजीत तो चार दिन भी इंतज़ार नहीं कर पाया और दूसरी औरत घर ले आया। समाज में दबी जबान से बातें की किंतु कोई उसका प्रत्यक्ष विरोध नहीं कर सका। इसके विपरीत, यदि कोई विधवा स्त्री दूसरा विवाह करने की इच्छा रखे तो यही समाज उसे कुलटा, चरित्रहीन आदि कई तमगों से नवाजता है और कभी-कभी तो स्थिती 'मॉब लिंचिंग' (भीड़ द्वारा पीट-पीटकर हत्या कर देना) तक पहुँच जाती है, जैसा कि अक्सर समाचार-पत्रों में पढ़ने को मिल जाता है। अर्थात् समाज द्वारा पुरुष और स्त्री आधारित विपरीत मान्यताएँ निर्धारित हैं।

पुरुष की इस बेवफाई की ओर इशारा करते हुए लेखिका 'अफशाँ' से कहलवाती है, "हाय अल्ला, क्या उसे अपनी बीवी से ज़रा-भी मुहब्बत नहीं थी! आदमी एक छत के साए में दो रोज़ अगर बिल्ली के संग भी गुजार ले तो कितना लगाव हो जाता है, फिर वह तो उसके बच्चे की माँ थी।"[6] 'अफशाँ' और 'लल्ली' के बातचीत का क्रम आगे बढ़ता है। सुरजीत द्वारा दूसरी औरत लाने पर और घटती हुई मानवीय संवेदनाओं पर बात करते हुए 'लल्ली' कहती है, "तीसरे ही रोज वह एक नई औरत ले आया,

उसी मकान में। जैसे किसी का पिल्ला खो जाए और वह नया पिल्ला ले आए।" ..."देख लो, बस इतनी होती है मुहब्बत!"[7]

डॉ धर्मपाल अपनी पुस्तक 'नारी : एक विवेचन' में लिखते हैं, "आज दहेज का विभत्स रूप समाज में व्याप्त हो गया है। 'माँग' अथवा 'याचना' अथवा 'भिक्षा' शब्द दहेज के पर्याय बन चुके हैं। वांछित 'भिक्षा' न मिलने पर, नारी जाति के शत्रु एवं लोभी लालची पुरुष, नवविवाहिता पर अत्याचार करते हैं, उसे यातनाएं देते हैं और मांगी गई वस्तु अथवा धनराशि के प्रतिशोध में उसकी हत्या कर देते हैं। आये दिन दहेज के लोभियों द्वारा घटनाएं घटती रहती है।"[8] ममता कालिया ने अपने इस उपन्यास में दहेज रूपी सामाजिक कोढ़ की ओर भी ध्यान आकृष्ट कराया है। दहेज के नाम पर जाने कितनी अनगिनत नवविवाहिता घरेलू हिंसा की शिकार होती हैं और ससुराल पक्ष द्वारा जलाकर मार दी जाती हैं, लेखिका ने 'लल्ली' और 'अफशाँ' के माध्यम से इस विस्तार इस पर विस्तार से चर्चा की है। 'लल्ली' कहती है, "शायद अखबारों ने मेरी मानसिकता को चौपट कर डाला था। कोई दिन ऐसा न था, जब विवाहिता नवयुवतियों के मार डाले जाने से सचित्र समाचार न छपते हों। बहु-प्रताड़ना राष्ट्रीय आंदोलन का रूप लेता जा रहा था। अच्छे पढ़े-लिखे, बेरोजगार लड़के एक अदद स्कूटर, फ्रिज या टी०वी० के लिए अपनी पत्नी को जला मारने में कतई संकोच न करते।"[9] रोज ही अखबार में किसी न किसी गृहिणी की तस्वीर छपी होती, जो संदिग्ध अवस्था में जल मरी या जला डाली गई। अफशाँ खबर पढ़कर लल्ली से पूछती है कि आपको गुस्सा नहीं आता तो लल्ली इसका प्रत्युत्तर देते हुए कहती है कि उसे गुस्सा आता है, इसलिए तो उसने शादी नहीं की।

इस उपन्यास की मुख्य विशेषता यह है कि लेखिका अगर समस्या की ओर ध्यान इंगित करा रही है तो उसका विकल्प सुझाने का भी प्रयास करती है। तभी तो, अफशाँ के माध्यम से वे कहती हैं, "लड़के-लड़कियाँ अगर अपनी मर्जी से शादी करें तो लड़कियों को यों बेमौत न मरना पड़े।"[10] निश्चित रूप से यहाँ लेखिका प्रेम-विवाह का समर्थन कर रही हैं क्योंकि अपनी मर्जी के विवाह से घरेलू हिंसाओं में कुछ कमी अवश्य की जा सकती है। उपन्यास में 'लल्ली' शादी नामक संस्था में यकीन नहीं करती और अपने अनुसार आजाद जीवन जीना चाहती है। 'अफ़शाँ' जब उसकी हिफाजत के लिए शादी की बात करती है तो 'लल्ली' उससे कहती है, "तुमने यह कैसे सोचा कि शादी कर लेने से हिफाजत का इंतजाम भी हो जाता है। कई मर्द औरतों से भी ज्यादा डरपोक होते हैं। जो डरपोक नहीं होते, वे स्वार्थी होते हैं। मेरी सहेली का पति कहता है, पत्नी को हमेशा ट्रैफिक-साइड पर रखकर चलो तो सुखी रहोगे। शादी के बाद के खतरे शादी के पहले के खतरों से ज्यादा बड़े होते हैं।"[11] ममता कालिया ने अपने इस उपन्यास में 'बलात्कार की समस्या' को भी रेखांकित किया है। विशेषकर कामकाजी लड़कियाँ अक्सर अपनी सुरक्षा को लेकर चिंतित दिखती हैं। उपन्यास में 'लल्ली' को अपनी भाषा पर नाज था। वह अपनी भाषा को ही हथियार मानती थी, "भाषा मेरी तोप थी, भाषा मेरा तमंचा। सारी दुनिया का बारूद और तेजाब इस एक अकेली जुबान की नोक पर रख दिया था भगवान ने।"[12] जबकि 'अफशाँ' अपनी सुरक्षा के लिए अपने पास कटार और रिवॉल्वर जैसे हथियार रखती है। यह विडम्बना ही है कि समाज में बलात्कार जैसे कुकृत्य अपनी जड़ें जमाए हुए हैं जिसकी वजह से लड़कियाँ अपनी सुरक्षा की दृष्टि से स्वयं के पास हथियार रखने को मजबूर हैं। एक दिन 'अफशाँ' दो वहशी दरिंदों के हत्थे चढ़ जाती है किंतु समय रहते 'लल्ली' के साहस द्वारा बचा ली जाती है। 'लल्ली' को लगता है कि इस वारदात की खबर पुलिस को करनी चाहिए जिससे कि भविष्य में ऐसे खतरे सामने न आए। अब 'लल्ली' को स्वयं का अकेले रहना भी खतरनाक लग रहा था क्योंकि हादसों की न तो कोई उम्र होती है और न ही तारीख। किंतु इस घटना का गंभीर घाव 'अफशाँ' को लगता है। वह रो-रोकर बेहाल हो जाती है और बेहोश हो जाती है। हामिद की सहायता से उसे पुलिस की बजाय डॉक्टर के पास ले जाया जाता है। 'लल्ली' के शब्दों में, "इस वारदात में शारीरिक हानि से तो हम सब बच गए, लेकिन मानसिक क्षति का अंदाजा लगाना किसी के लिए भी असंभव था। तीन दिन, तीन रात तक अफशाँ नर्सिंग होम में रह-रहकर यही चीत्कार करती रही, "आपा, वो आ रहे हैं, मुझे बचाओ।" हामिद ने दौड़-भागकर उसका रिजर्वेशन कुछ और पहले कर दिया। धीरे-धीरे अफशाँ सामान्य हुई। उसे महसूस हुआ कि उसकी वजह से हम सब बेहद फिक्रमंद रहते हैं। वह एक-एक कदम अपनी पुरानी दुनिया में लौटी, जैसे कोई बच्ची वर्षों पोलियोग्रस्त रहने के बाद एक-एक पाँव

उठाना फिर से सीखे। घर में वह साए की तरह मेरे साथ-साथ रहती और बार-बार कहती, "आपा, आप न होतीं तो हम भी न होते, हम खुद ही चलकर कब्र में सोते। मुझे तो आज पता चला है आपा कि खतरे में हथियार नहीं, इंसान काम आता है। सारे हथियार एक तरफ, इंसानी मुहब्बत एक तरफ। जाने के रोज़ तक वह इतनी नॉर्मल हो गई थी कि उसने अपना सब काम पूरा कर लिया, रिकॉर्डिंग, शूटिंग और मॉडलिंग का। सामान कुछ खास कुछ खास नहीं था उसका। एक-तिहाई तो यहीं छोड़े जा रही थी, मेरे पास। उसने कहा, "अभी तो मुझे फिर आना है, एक बार नहीं बार-बार। मेरी असली बिरादरी तो यहीं है आपा।" अपनी स्लीपरें तक नहीं उठाईं उसने, "ये हैं तो आपको लगेगा मैं हूँ।"[13]

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि ममता कालिया की नायिकाएँ हालातों से मजबूर, बेबस, बेचारी नायिकाएँ नहीं हैं बल्कि वे हालातों का डटकर सामना करती हैं और पुन: अपनी दिनचर्या में लौट आती हैं। अपने एक लेख 'बलात्कार से जीवन खत्म नहीं हो जाता' में ममता कालिया लिखती हैं, "बलात्कार के प्रति पुरातन सोच की जकड़बंदी यह है कि बलात्कार हुआ तो पीड़ित की इज्जत हमेशा के लिए चली गयी। वह लड़की परिवार और समाज में सिर उठा कर जीने के हक से वंचित हो गयी और उसके भविष्य पर धब्बा लग गया। ये सब सामन्ती विचारधारा के तर्क हैं जो पुरूष समाज द्वारा स्त्री को दबाकर रखने के लिए गढ़े गए हैं।"[14] वे आगे लिखती हैं, "जीवन के कुरुक्षेत्र में लड़कियाँ उतरी हैं, शिक्षा और रोजगार के तीरकमान उनके हाथ में हैं। इस रणक्षेत्र में किसी भी तरह की चुनौती उनके सामने आ सकती है, घात-प्रतिघात, यौन हिंसा, यौन विकृति। पिछली शताब्दियों में केवल अबलायें सताई जाती थीं। इक्कीसवीं शताब्दी में प्रबलायें भी सताई जा रही हैं। ऐसे में लड़कियों को सबसे पहले अपना दृष्टिकोण बदलना चाहिए। जहाँ तक हो सके यौन अपराधी की गिरफ्त से बचें। अगर यौन हिंसा फिर भी घटित हो जाए तो उसे ऐसे लें जैसे कोई अन्य दुर्घटना, जैसे घुटने पर चोट या टखने में मोच। अगर कूपमंडूक परिवार शोर मचाये, 'हाय-हाय तेरी इज्जत लुट गयी' तो पलट कर कहें, 'इज्जत मेरी नहीं, उसकी लुटी जो थोड़ी देर बाद टीवी के पर्दे पर अपने मुँह पर तौलिया लपेटे नजर आयेगा।' मुझे लगता है अगर यौन हिंसा की यही रफ्तार रही तो एक दिन हमारे समस्त पुरुषों के मुँह पर तौलिया लिपट जायेगा।"[15] अपनी इन्हीं विशिष्टताओं के कारण ममता कालिया और उनका लेखन हिंदी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान निर्धारित किए हुए हैं। सबसे मुख्य बात यह है कि ये स्त्रियों की समस्याओं की ओर ध्यान खींचती ही हैं, इसके साथ-साथ समस्या का समाधान सुझाने का भी प्रयास करती हैं। इसलिए वे कहती हैं कि, 'बलात्कार से जीवन खत्म नहीं हो जाता' और दहेज की समस्या और घरेलू हिंसा से बचने के लिए 'मर्जी से निकाह या शादी' की बात पर बल देती हैं।

इस उपन्यास के संबंध में रवींद्र कालिया लिखते हैं, "आधुनिक नगर बोध के साथ-साथ जीवन के स्पर्धा व्यक्त करने वाले लघु उपन्यास 'लड़कियाँ' व्यक्ति-मन के मर्मस्थल की ई०सी०जी० रिपोर्ट भी प्रस्तुत करता है। ममता कालिया ने मुंबई नगर के विज्ञापन-जगत को करीब से देखकर जो प्रभाव ग्रहण किए, 'लड़कियाँ' उसी का सृजनात्मक रूप है। युवा पीढ़ी के अपने स्वप्न हैं और अपने संघर्ष। प्रतिभा और पराक्रम के रास्ते वह अपना गंतव्य पाने में दृढ़ विश्वास रखती है। चपल, चंचल गद्य में लिखा यह लघु उपन्यास महानगर में रहने और काम करने वाली अविवाहित लड़कियों की प्रामाणिक छवि प्रस्तुत करता है।"[16] ममता कालिया ने इन्हीं कामकाजी अविवाहित लड़कियों को माध्यम बनाकर स्त्री-शोषण के कई गंभीर मुद्दों पर अपने इस लघु उपन्यास में बात की है। पृष्ठ संख्या की दृष्टि से भले ही यह उपन्यास लघु है किंतु स्त्री विमर्श के कई गंभीर मुद्दों को अपने में समेटे हुए है।

संदर्भ :

1.पालीवाल, कृष्णदत्त (संपा०-संक०), नारी-विमर्श की भारतीय परंपरा, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2014, 'इस लड़ाई को उन्हें खुद लड़ना होगा' (जवाहरलाल नेहरू), भूमिका से उद्धृत

2. कालिया,ममता, तीन लघु उपन्यास, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2020, पृ०86 -कालिया, ममता, तीन लघु उपन्यास, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2020, पृ०- 86

3. वही, पृ०- 85

4.वही, पृ०- 85

5.वही, पृ०- 86

6.वही, पृ०- 89

7.वही, पृ०- 90

8. धर्मपाल, नारी : एक विवेचन, भावना प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण- 1996, पृ०-155

9. कालिया, ममता, तीन लघु उपन्यास, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2020, पृ०91 -कालिया, ममता, तीन लघु उपन्यास, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण-2020, पृ०- 91

10. वही, पृ०- 97

11. वही, पृ०- 99

12. वही, पृ०- 101

13. वही, पृ०- 110

14. कालिया, ममता, भविष्य का स्त्री विमर्श, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, आवृत्ति संस्करण- 2017, पृ०- 11

15. वही, पृ०- 12

16. शर्मा, डॉ० सीमा, ममता कालिया के कथा साहित्य में नारी चेतना, अनुसंधान पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपुर, संस्करण- 2016, पृ०- 24